संस्कृत भाषा में कृषि-ग्रन्थ

डॉ. सुधा सिंह*

sudhavaidik@gmail.com

सार

संस्कृत प्राचीन काल से ही भारत के समस्त शास्त्रों की भाषा रही है, यही कारण है कि आज भी जबकि संस्कृत मातृभाषा के रूप में बहुत कम लोगों के द्वारा व्यवहृत होती है यह पठन-पाठन का अनिवार्य अङ्ग बनी हुई है। वर्तमान समय में संस्कृत को लोग प्रायः धर्म, दर्शन, ज्योतिष और आयुर्वेद के कारण जानते हैं, लेकिन बहुत कम लोगों को यह ज्ञान है कि संस्कृत में कृषि-विज्ञान के ऊपर भी ग्रन्थ लिखे गए हैं, जो कि बहुत प्राचीन काल से संस्कृत-साहित्य में विद्यमान रहे हैं। उदाहरण के लिए हमें इनकी संख्या भले ही बहुत कम मिले किन्तु इससे इस शास्त्र का महत्व तनिक भी कम नहीं होता। प्रस्तुत शोध पत्र में इन्हीं ग्रन्थों के ऊपर प्रकाश डाला गया है।

Keywords: कृषि पराशर, काश्यपीय कृषिसूक्ति, कृषिकाण्डम्, उद्यानशास्त्र, उपवनविनोद, वृक्षायुर्वेद,

1. कृषि पराशर

यह संस्कृत भाषा में निबद्ध कृषि का सर्वाधिक चर्चित ग्रन्थ है। यह महर्षि पराशर के द्वारा विरचित माना जाता है। इसमें प्रारम्भ में ही कहा गया है कि अन्न ही प्राण है बल है अन्न ही समस्त अर्थ का साधन है देवता असुर मनुष्य सभी अन्न से जीवित है तथा अन्न धान्य से उत्पन्न होता है और धान्य बिना कृषि के नहीं होता। इसलिए सभी कर्म छोडकर कृषि कर्म ही करना चाहिए।[1] कृषि के लिए जल की आवश्यकता को देखते हुए तथा जल के प्रमुख साधन होने के कारण वृष्टि ज्ञान को पराशर ने प्रमुखता दी है[2] तथा इसी क्रम में बतलाया है कि विभिन्न ग्रहों का वर्षा पर क्या प्रभाव पडता है जैसे कि चन्द्रमा के संवत्सर का राजा होने पर पृथ्वी धान्य से पूर्ण होती है[3] तथा शनि के राजा होने पर वर्षा मन्द होती है।[4]

---

* संस्कृत प्राध्यापिका, राजकीय बालिका इन्टर कॉलेज, पं. गोविन्द वल्लभ पन्त कृषि विश्वविद्यालय, पन्तनगर, उत्तराञ्चल.

[1] अन्नं प्राणा बलं चान्नमन्नं सर्वार्थसाधनम्। देवासुरमनुष्याश्च सर्वे चान्नोपजीविनः।।

अन्नं हि धान्यसंजातं धान्यं कृष्या विना न च। तस्मात् सर्वं परित्यज्य कृषिं यत्नेन कारयेत्।। कृषिपराशर, श्लोक संख्या 6-7

[2] वृष्टिमूला कृषिःसर्वा वृष्टिमूलं च जीवनम्। तस्मादादौ वृष्टिज्ञानं समाचरेत्।। वही, श्लोक संख्या 10

[3] यत्राब्दे चन्द्रजो राजा सर्वशस्या च मेदिनी। कृषिपराशर, श्लोक संख्या 18

इसीप्रकार मेघों के प्रकार का वर्णन, अलग-अलग ऋतुओं में होने वाली वर्षा के लक्षणों का वर्णन तथा अनावृष्टि के लक्षणों का भी पराशर ने वर्णन किया है। साथ ही ऋषि ने कृषि कर्म में नियुक्त पशुओं के भी उचित रखरखाव करने को कहा है तथा उतना ही कृषिकर्म करने का निर्देश किया है जिससे पशु को कष्ट न हो जो पशुओं के प्रति भारतीय व्यवहार का द्योतक है।[5]

इसके पश्चात् गौ शाला की स्वच्छता पर भी विशेष ध्यान देने की बात कही है। पशुओं के त्यौहारों का तथा हल सामग्री का भी वर्णन ऋषि ने किया है।इसके पश्चात् कृषि कर्म प्रारम्भ करने के समय का वर्णन करते हुए कहा है कि शुभ समय में ही यथाविधि पूजन करके हलप्रसारण करना चाहिए।[6]

इसके पश्चात् शोधित किए तथा संरक्षित हुए बीजों को उचित समय में बोने का निर्देश है[7] साथ ही धान्य को काटने तथा उसको तृणरहित करने का वर्णन है। पराशर ऋषि कहते है कि जो धान्य तृण रहित नहीं किया जाता वो क्षीण हो जाता है।[8]

इसके साथ ही जल रक्षण का भी वर्णन प्राप्त होता है। ऋषि पराशर इसके लिए निर्देश करते हुए कहते है कि शरत्काल आने पर जल का संरक्षण करना चाहिए तथा क्षेत्र में नल का रोपण करना चाहिए।[9]

इसके साथ पराशर ने धान्य काटने से पूर्व पुष्ययात्रा का विधान किया है जो सभी विघ्नों की शान्ति तथा धान्य की वृद्धि के लिए होती थी।[10] तत्पश्चात् पौष मास में धान्य काटने का निर्देश किया गया है।[11]

2. कृषि पराशर तथा काश्यपीय कृषिसूक्ति का तुलनात्मक अध्ययन-

कृषि से सम्बन्धित दोनो ही ग्रन्थों में कृषि कार्य को अन्य समस्त कायरें से उत्तम तथा प्रमुख माना गया है। इसमें काश्यपीय कृषिसूक्ति में कृषि योग्य भूमि के विषय में विस्तृत तथा सूक्ष्म वर्णन प्राप्त होता है जैसा कि कहा

---

[4] मन्दावृष्टिः सदा वातो नृपे संवत्सरे शनौ।। कृषिपराशर, श्लोक संख्या 21

[5] कृषिं च तादृशीं कुर्याद्यथा वाहान्न पीडयेत्। वाहपीडार्जित शस्यं गर्हितं सर्वकर्मसु।। वही श्लोक संख्या 84

[6] शुभेऽर्के चन्द्रसंयुक्ते शुक्लयुग्मेन वाससा। स्नात्वा गन्धैश्च पुष्पैश्च पूजयित्वा यथाविधि।।..संपूज्याग्निं द्विजं देवं कुर्याद्धलप्रसारणम्।। वही

[7] शोषयेदातपे सम्यक् नैवाधो विनिधापयेत्। वही श्लोक संख्या 157

बीजस्य पुटिकां कृत्वा विधान्यं तत्र शोधयेत्।। वही श्लोक संख्या 158

[8] निष्पन्नमपि यद्धान्यं न कृतं तृणवर्जितम्। न सम्यक् फलमाप्नोति तृणक्षीणा कृषिर्भवेत्।

[9] तथा संरक्षेद् वारि शरत्काले समागते। अथ कार्तिकसंक्रान्त्यां क्षेत्रे च रोपयेन्नलम्।

केदारेशानकोणे च सयत्नं कृषकः शुचिः।। वही श्लोक संख्या 117-118

[10] सर्वविघ्नप्रशान्त्यर्थं कार्या सस्यस्य वृद्धये। वही श्लोक संख्या 235

[11] पौषे मासि ततः कृर्याद्धान्यच्छेदं विचक्षणः॥237

गया कि इसप्रकार बहुत प्रकार की पृथ्वी कही गयी है। इसलिए राजा को धान्य की वृद्धि के लिए अस्थि पाषाणखण्डों से हीन भूमि का परीक्षण करना चाहिए।[12]

इसके अतिरिक्त कृषिसूक्ति में जल हेतु न केवल वर्षा अपितु अन्य संसाधनों पर निर्भरता दिखायी पडती है तथा उनके निर्माण तथा रखरखाव का भी वर्णन मिलता है जबकि पराशर ने वर्षा पर निर्भरता प्रदर्शित करते हुए विभिन्न कालों का होने वाली वर्षा पर प्रभाव का विस्तृत वर्णन किया है।

पशुओं के सम्बन्ध में भी कृषि सूक्ति में वृषभ के लक्षणों द्वारा उत्तम वृषभ को पहचानने का वर्णन प्राप्त होता है। साथ ही गोशाला में उनकी उनकी आहारादि की उचित व्यवस्था का भी वर्णन है। पराशर ने भी पशुओं के उचित रखरखाव को महत्त्व दिया है ।[13]

दोनो ही ग्रन्थों में भूमि कर्षण के पश्चात् जल से आर्द्र होने पर ही स्वस्थ बीज वपन का विधान किया गया है।कृषि पराशर में बीज वपन के समय की विशेष चर्चा की गयी है। साथ ही दोनो ही ग्रन्थों में बीज को दूषित होने से बचाने हेतु उपायों की चर्चा भी की गयी है। यद्यपि कृषि सूक्ति में इसका विशेष वर्णन प्रप्त होता है।

इसके अतिरिक्त कृषि सूक्ति में धान्य के साथ ही शाकादि उत्पादन का वर्णन भी प्राप्त होता है। साथ ही राजा द्वारा उनके तौल; रक्षण आदि हेतु व्यवस्था करने के भी निर्देश मिलते हैं। इसके अतिरिक्त भोज्य पदार्थो का दूष्यादूष्य विचार भी इसमें प्राप्त होता है और भोजन ग्रहण करने से पूर्व किए जाने वाले यज्ञ का भी इसमें वर्णन प्राप्त होता है। इसप्रकार कृषि सूक्ति में न केवल कृषि प्रत्युत् उससे सम्बन्धित मानव संस्कृति का पूर्ण वर्णन ही हमें प्राप्त हो जाता है।

3. काश्यपीय कृषिसूक्ति

इनमें सर्वप्रथम ग्रन्थ है काश्यप ऋषि द्वारा प्रणीत कृषि सूक्ति। यह ग्रन्थ चार भागों में है। जिसमें सर्वप्रथम शास्त्र का उपदेश देते हुए राजा द्वारा रक्षित पर्वत नदी नद वनप्रदेश युक्त भूमि का विभाजन धान्य की दृष्टि से किया गया है।[14] क्योंकि शुभलक्षणों से युक्त भूमि ही परिवार के आरोग्य एवं धनधान्य से से युक्तता का कारण होती है। पुनः भूमि में सिंचन हेतु जल की स्थापना का कथन किया गया है। इसके लिए भूमि के निकट ही जलाशय निर्माण की बात कही गयी है। जलाशय न होने की स्थिति में कुल्या कूप वापी के द्वारा सिंचन का कार्य करने का भी वर्णन है।[15] साथ ही वर्षा ऋतु के समय जलसंरक्षण की भी बात कही गयी है।[16] कृषि कर्म के लिए

---

[12] एवं बहुविधा जाता मेदिनीयं प्रकीर्तिता। अतो महीपतिः सर्वप्रणिपालनः दीक्षितः।।

सस्याभिवृद्धये भूमिं परीक्षेत सुलक्षणाम्।अस्थिपाषाणखण्डाद्यैः हीनां मृदुलमृत्तिकाम्।। कृषिपराशर, श्लोक संख्या 32-33

[13] गोशाला सुदृढा यस्य शुचिर्गोमयवर्जिता। तस्य वाहा विवर्धन्ते पोषणैरपि वर्जिताः।। वही श्लोक संख्या 87

[14] नदेन सारभूम्या च हृदेन महतामपि च । क्वचित् शर्करस्या च क्वचितदत्युष्णरुपिणी ।।

क्वचित् जलविहीना च जातेयं वसुधा कमात् । क्वचिदूषररुपा च क्वचित् बीजविनाशिनी ।। काश्यपीयकृषिसूक्ति भाग-१

[15] जलाशयविहीने तु स्थले ग्रामे पुरे तथा । वने वनान्तरे वापि तां कुल्यां क्षेत्रगामिनीम् ।।

प्रकल्पयेत् तथा धीमान् सस्यवृद्ध्यै विशेषतः । ....।। वही श्लोक संख्या

[16] कादम्बिनीभिः काले तु संवृष्टं सलिलं नृपः । जलाशयादिस्थानेषु पूरयेत् क्षेमसिद्धये ।।काश्यपीयकृषि सूक्ति179

किसी विशेष वर्ग को निर्धारित नहीं किया प्रत्युत् ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र सभी को अपनी अपनी योग्यतानुसार कार्य करने को कहा है। तत्कालीन कृषि कार्य हेतु आवश्यक वस्तुओं में वृषभ एवं लांगूल थे जिनकी सहायता से कृषि कार्य होता था। कृषक हल के द्वारा भूमि का कर्षण करता था पुनः उसमें गोबर की खाद डालता था उसे उपजाऊ बनाने के लिए[17] तथा खनित्र गोल आकार के तलवार और छुरिका ये ही कृषि कार्य के आवश्यक द्रव्य थे।[18] कृषि कर्म से पूर्व लांगल तथा वृषभ की पूजा की जाती थी। और चूंकि वृषभ द्वारा ही कृषिकर्षण कार्य होता था इसलिए उनका शुभलक्षणों से युक्त होना आवश्यक माना गया जिससे वे दीर्घ काल तक कार्य कर सके। ऐसे वृषभों की रोगादि से रक्षा करने का भी निर्देश प्राप्त होता है।[19] और इसके द्वारा तत्कालीन पशुविज्ञान का भी हमें ज्ञान प्राप्त होता है।

तत्पश्चात् कृषि कर्म के सन्दर्भ में वर्णन मिलता है कि सर्वप्रथम भूमि को कर्षण के पश्चात् जल से पूर्ण कर लेना चाहिए तदुपरान्त उचित समय पर उसमें बीज वपन करना चाहिए। चूंकि अच्छे बीजों से ही अच्छे फल प्राप्त होते है। इसलिए बीजों के संरक्षण पर भी विशेष ध्यान देने का वर्णन प्राप्त होता है।[20]

इसके पश्चात् स्थल विशेष के अनुसार बीजवपन करने का निर्देश प्राप्त होता है। इसके साथ ही कृषि की प्राणियों से रक्षा करने का भी वर्णन मिलता है।[21] बीज रक्षण के उपायों का वर्णन करते हुए कही गया है कि प्राप्त बीजों को दण्ड आदि के मर्दन के बाद तथा धूप में सुखाने के बाद उनका संग्रह करना चाहिए[22] तथा बीजों को साफ करने के लिए शूर्प तथा वायु का प्रयोग करने के लिए कहा गया है।[23] इसके साथ ही धान्य के उत्पादन के पश्चात् शाक का भी ऋतु के अनुरुप उत्पादन करने का वर्णन प्राप्त होता है क्योंकि भोजन में मात्र धान्य का ही नहीं प्रत्युत् शाक का भी प्रयोग किया जाता है।

वस्तुतः कृषिकर्म द्वारा ही समाज के सभी वर्गों को धान्य द्रव्यराशि तैल वस्त्र शाकादि प्राप्त होते है इसलिए कृषिकर्म को सर्वोत्तम कहा गया है।[24] ग्रन्थ के तृतीय भाग में भोज्य तथा अभोज्य का वर्णन भी मिलता है जिसमें

रक्षयेत् तत्प्रयत्नेन जलमूला कृषिर्मता । अतः सर्वत्र भूपालैरन्यैः पुरुषपुंगवैः ।। काश्यपीयकृषिसूक्ति श्लोक संख्या 180

[17] लोष्टांश्च लगुडानन्यान् बहिर्निक्षिप्य गोमयम् । आजकं वलगं तत्र स्थापयेत् सारवृद्धये ।। वही श्लोक संख्या 266

[18] खनित्रान् शंकुलान् क्षुद्रतलुकान् खड्कान् तथा । छुरिका याश्च कृष्यर्हाः द्रव्यशास्त्रेषु निश्चितम् ।। वही श्लोक संख्या 267

[19] निश्चितान् दोषहीनांश्च वृषभादीन् शुभार्थिनः । रक्षेयुश्च प्रयत्नेन कृषिसाफल्यहेतवे।। वही श्लोक संख्या 306

कालेषु पोषणीयाश्च हिताहारप्रदानतः । रोगेभ्यो रक्षणीयाश्च लालनादिभिरन्वहम् ।। वही श्लोक संख्या 307

[20] शाल्यादिबीजानि तथा शाकबीजानि वा पुनः । वृक्षाणामपि बीजानि कन्दानामपि बीजकम्।।

क्रीत्वा संगृह्य वा लोके कृषिकर्मविदो नराः। ....।।

स्वक्षेत्रेषु स्वदेशस्थेष्वदरात् युक्तिस्तथा । नानारूपेषु वृषभैः कर्षितेषु विशेषतः।। वही श्लोक संख्या408- 410

[21] मूषकात् शलभात्कीरात् शुकादपि च दुष्टतः । प्राणिवर्गाद्रक्षणं तु विष्ठोषफलदं विदुः । । वही श्लोक संख्या 475

[22] दण्डाद्यैर्मर्दनं प्रोद्गमातपे शोषणं तथा । आढकीदण्डकाण्डादीन् वृषाश्वादिचतुष्पदाम् ।।

भक्षणार्थमिहादिष्टन् रक्षेयुश्च कृषीवलाः । पुंजीकृत्य खलस्थाने स्वगृहोस्वोचितस्थले।। वही श्लोक संख्या 569-70

[23] शूर्पादिविन्यासयोगात् वातवीजनतोऽपि वा । वपेचनाच्चातनाद्वापि निर्मलीकृतरुपकान् ।। वही श्लोक संख्या 575

[24] सर्वकार्येषूत्तमं तु कृषिकर्म प्रशस्यते । तत्पालयेत् स्वदेशेषु यत्नतो युक्तितः कमा।। वृक्षायुर्वेद श्लोक संख्या 129

कहा गया है कि कृमि मक्षिका चींटी मार्जार मूषक आदि के द्वारा दूषित अन्न का भक्षण नहीं करना चाहिए। तथा ग्रन्थ के चतुर्थ भाग में विविध यज्ञों में अर्पित किए जाने वाले पदार्थों का वर्णन है।

4. कृषिकाण्डम्

सरस्वती भवन पुस्तकालय में प्राप्त पाण्डुलिपि हमें कृषिकाण्डम् के नाम से प्राप्त होती है। यह भी महर्षि पराशर के द्वारा विरचित लिखा है। कृषि-पराशर और कृषिकाण्डम् दोनों में प्रायः कई श्लोकों में समानता पाई जाती है किन्तु कई नवीन श्लोक भी मिलते हैं साथ ही समान श्लोकों में भी कई पाठभेद मिलते हैं। ऐसा भी सम्भव है कि शालिहोत्र की तरह ही प्राचीनकाल में कृषि भी पराशर के नाम से जानी जाती रही हो और कालान्तर में अनेक व्यक्तियों ने स्वयं की रचना को महर्षि पराशर का नाम दे दिया हो, क्यों कि संस्कृत में पशुचिकित्सा विषयक शास्त्र को महर्षि शालिहोत्र के नाम से ही जाना जाता है। ध्यातव्य है कि इस शास्त्र के प्रवर्तक विशेषज्ञ के रूप में सबसे पहले शालिहोत्र का ही नाम आता है। इनका नाम हमें महाभारत में भी प्राप्त होता है।

5. उपवनविनोद या वृक्षायुर्वेद

कृषि सूक्ति तथा कृषि पराशर जैसे कृषि ग्रन्थों के अतिरिक्त उपवनविनोद नामक ग्रन्थ भी प्राप्त होता है जिसमें कृषि की ही एक अन्य शाखा उद्यान पर वर्णन प्राप्त होता है। इस ग्रन्थ के प्रारम्भ में ही कहा गया है कि आनन्द के समस्त साधन उद्यान सुख के बिना व्यर्थ है।[25] इसके पश्चात् सर्वप्रथम वृक्षों के महत्त्व[26] की चर्चा करते हुए विभिन्न प्रकार के गुणों से युक्त तथा शुभ अशुभ का विचार रखते हुए वृक्षों को रोपित करने का निर्देश है जिसमे पिप्पल;शिरीष; पलाश उदुम्बर तुलसी आदि मुख्य है। इन वृक्षों का रोपित करने से पूर्व भूमि परीक्षा का भी निर्देश है जिससे वृक्ष भलीप्रकार रोपित हो सके।[27]

वृक्षों के प्रकारों का भी वर्णन करते हुए वनस्पति द्रुत लता गुल्म प्रकार तथा इनकी उत्पत्ति बीज काण्ड तथा कन्द से बतायी गयी है।बीज से रोपण में मुख्य रूप से आषाढ तथा श्रावणमास को उपयुक्त माना गया है।[28] तथा बीजरोपण के बाद उनकी रक्षा भी करने का वर्णन है। उद्यान निर्माण में कूप निर्माण की भी बात कही गयी है और उसके लिए भूमि परीक्षण का निर्देश किया है। उपवनविनोद में उन उपायों की भी चर्चा प्राप्त होती है

---

[25] नवं वयो हारि वपुर्वरांगनाः सखाकलावित्कलवल्लकीस्वनः।

धनं हि सर्वं किलं सुखैषिणो विना विहारोपवनानि भूपतेः।। वही श्लोकसंख्या 2

[26] दशकूपसमा वापी दशवापीसमो ह्रदः। दशह्रदसमो पुत्रो दशपुत्रसमो द्रुमः।। वही श्लोक संख्या 5

[27] न जांगला न चानूपा भूमिः साधारण शुभा। तस्यां सर्वेऽपि तरवः प्ररोहन्ति न संशयः।। वही श्लोक संख्या 39

[28] आषाढे श्रावणे मासि बीजावपनरोपणे। वही श्लोक संख्या 63

जिनके द्वारा वृक्ष शीघ्रता से वृद्धि करते है।[29] तथा वृक्षों के व्याधिग्रस्त हो जाने पर विविध उपायों द्वारा उनकी चिकित्सा का वर्णन है।

इसमें विचित्रकरणम् नामक एक अध्याय है जिसमें कुछ ऐसे प्रयोग बताये गये है जिनके द्वारा वनस्पतियों में कुछ नवीन कार्य हो जाते हैं जैसे कि वृक्ष के कटे तने पर इक्षु के रस का लेप करने से असमय में ही फूल खिल जाते है।[30] इस प्रकार उपवनविनोद में मुख्यतः वृक्षों से सम्बन्धित विषयों का वर्णन है।

निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं कि प्राचीन समय से ही कृषि एवं वृक्षों से सम्बन्धित ज्ञान नितान्त ही वैज्ञानिक रहा और आज भी यह हमारा मार्गदर्शन करने की क्षमता रखता है। आज जबकि कृषि कार्यों में हर ओर आधुनिकता का प्रयोग हमारी भूमि; हमारे पशु तथा हमारे स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव डाल रहे हैं ऐसी स्थिति में हम अपनी प्राचीन कृषि-पद्धति का प्रयोग कर दोनों की ही रक्षा करने में समर्थ हो सकते हैं।

सन्दर्भग्रन्थसूची

1. Ayachit S. M. (Tr.) 2002. ***Kashyapiya Krishi Sukti*** (A Treatise on Agriculture by Kashyapa). Agri-History Bulletin No. 4. Asian Agri-History Foundation, Secunderabad-500009, Andhra Pradesh, India.
2. Chaudhuri, S. P. Ray (Tr.) 1936. ***Kṛṣi-Saṅgraha,*** Imperial Bureau of Soil Science. England, Monthly Bulletin No. 59.
3. Nene Y. L. 2007. ***Glimpses of the Agricultural Heritage of India***. Asian Agri-History Foundation, Secunderabad- 500009, Andhra Pradesh, India.
4. Sadhale, Nalini (Tr.) 1999. ***Krishi-Parashara*** (Agriculture by Parashara). Agri-History Bulletin No. 2. Asian Agri-History Foundation, Secunderabad - 500009, Andhra Pradesh, India.
5. Sadhale, Nalini (Tr.) 2004. ***Vishvavallabha (Dear to the World: The science of Plant Life)***. Agri-History Bulletin No. 5. Asian Agri-History Foundation, Secunderabad - 500009, Andhra Pradesh, India.
6. Saxena R. C., Choudhary S. L., and Nene Y. L. 2009. ***A Textbook on Ancient History of Indian Agriculture.*** Asian Agri-History Foundation (AAHF), Secunderabad 500009; and Rajasthan Chapter of AAHF, Udaipur 313002, India.
7. Singh, Srinarayan (Tr. Hindi) 1971. ***Krishi-Parashara.*** Jayabhārata Press, Ramnagar, Varanasi, India. 80pp.
8. Wojtilla, Harrassowit, Gyula, Wiesbaden, 2006. *History of Krsisastra : a history of Indian literature on traditional agriculture. 91 pp.*
9. जुगनू, डॉ. श्रीकृष्ण (अनु.) 2004. ***वृक्षायुर्वेदः*** (सुरपाल विरचित), चौखम्बा संस्कृत सीरीज ऑफ़िस, वाराणसी, भारत।

[29] धूपो घृतस्यसमृदोयववारिसेको नित्यं च दुग्धसलिलैः कुणापाम्बुभिर्वा।

लेपो विडङ्गतिलकंल्ककृतः शिशूनां वृद्धिकरोति परमां खलु भूरूहाणाम्॥ वृक्षायुर्वेद, श्लोक संख्या 166

[30] सम्पक्केक्षुरसविदारिकन्दकविलिप्तमूलभागस्य। सिक्तस्येक्षुरसेन च तरोरकाले भवेत्कुसुमम्।। वही श्लोक संख्या 200

10. जुगनू, श्रीकृष्ण (अनु.) 2005. ***विश्ववल्लभ-वृक्षायुर्वेदः;*** न्यू भारतीय बुक कार्पोरेशन, 5824, न्यू चन्द्रावल (निकट शिव मन्दिर), जवाहरनगर, दिल्ली-110007, भारत।
11. सिंह, डॉ. उमेश कुमार (सम्पा.) 2010. ***कृषिपराशरः;*** परिमल पब्लिकेशन्स, 27/28 शक्तिनगर, दिल्ली-110007, भारत।